FRA 2006 को समझना: न्याय, संरक्षण और चुनौतियाँ

यह एडिटोरियल 18/12/2023 को 'द हिंदू' में प्रकाशित "An uphill struggle to grow the Forest Rights Act" लेख पर आधारित है। इसमें भारत में वन अधिकार अधिनियम के कार्यान्वयन में व्याप्त चुनौतियों एवं कमियों के बारे में चर्चा की गई है।

प्रिलिम्स के लिये:

वन अधिकार अधिनियम, गौण वन उत्पाद, FCA संशोधन 2023, भारतीय वन अधिनियम, 1878, वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम 1972, वन (संरक्षण) अधिनियम 1980 (FCA)।

मेन्स के लिये:

FRA और इसके प्रावधान, इसके कार्यान्वयन के पीछे तर्क, वनवासियों के साथ अन्याय, वन अधिकार अधिनियम के कार्यान्वयन से संबंधित मुद्दे और आगे की राह।

18 दिसंबर 2006 को राज्यसभा ने लोकसभा द्वारा अधिनियमित 'अनुसूचित जनजाति और अन्य परंपरागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम [Scheduled Tribes and Other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Act] का अनुसमर्थन किया। यह अधिनियम, जिसे आमतौर पर वन अधिकार अधिनियम (Forest Rights Act- FRA) के रूप में जाना जाता है, भारत के सामाजिक-पर्यावरणीय विधान निर्माण में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ का प्रतीक है, क्योंकि यह कथित 'वन अतिक्रमण' (forest encroachments) पर लंबे समय से जारी रहे संघर्ष को समाप्त करने का प्रयास करता है। इसके साथ ही, यह अधिक लोकतांत्रिक एवं ऊर्ध्वगामी वन शासन (bottom-up forest governance) के सृजन का प्रयास करता है।

लेकिन **अधिनियमित होने के 17 वर्ष बाद** भी FRA वनवासियों को ऐतिहासिक अन्याय से मुक्त करने और वन प्रशासन को लोकतांत्रिक बनाने के अपने वादे को पूरा कर सकने में अक्षम सिद्ध हुआ है।

वन अधिकार अधिनियम 2006 और इसके प्रमुख प्रावधान:

- यह अधिनियम कई पीढ़ियों से वन में निवास कर रही **अनुसूचित जनजातियों (Forest Dwelling Scheduled Tribes- FDST) और अन्य परंपरागत वन निवासियों (Other Traditional Forest Dwellers- OTFD) के वन अधिकारों** की मान्यता, उनका पुनःस्थापन और उन्हें निहित करने से संबंधित है।
- वन अधिकारों का दावा ऐसे किसी भी सदस्य या समुदाय द्वारा किया जा सकता है जो **13 दिसंबर 2005 से पहले कम से कम तीन पीढ़ियों (75 वर्ष) से मुख्य रूप से जीविका की वास्तविक आवश्यकताओं के लिये वनों या वन भूमि पर निर्भर** रहे हों।
- यह FDST और OTFD की आजीविका एवं खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करते हुए वनों की संरक्षण व्यवस्था को सुदृढ़ करता है।
- **ग्राम सभा** को ऐसे किसी **व्यष्टिक वन अधिकार (IFR) या सामुदायिक वन अधिकार (CFR)** या दोनों की प्रकृति एवं सीमा को अवधारित करने के लिये प्रक्रिया आरंभ करने का प्राधिकार है जो FDST और OTFD को प्रदान किये जाने हैं।
- **यह अधिनियम चार प्रकार के अधिकारों की पहचान करता है:**
  - **स्वामित्व का अधिकार:** यह FDST और OTFD को ऐसी भूमि पर **(अधिकतम 4 हेक्टेयर तक) स्वामित्व का अधिकार** देता है जिन पर उनके द्वारा खेती की जा रही हो। यह स्वामित्व केवल उस भूमि के लिये है जिस पर वास्तव में संबंधित परिवार द्वारा खेती की जा रही है और किसी नई भूमि का अनुदान नहीं किया जाएगा।
  - **उपयोग का अधिकार:** वन निवासियों को गौण वन उत्पाद (Minor Forest Produce) **प्राप्त करने, चरागाह का उपयोग** करने आदि का भी अधिकार है।
  - **राहत और विकास का अधिकार: अवैध बेदखली या जबरन विस्थापन के मामले में पुनर्वास का अधिकार और बुनियादी सुविधाओं का अधिकार** (जो वन संरक्षण के लिये प्रतिबंधों के अधीन है)।
  - **वन प्रबंधन अधिकार:** इसमें ऐसे किसी भी सामुदायिक वन संसाधन का **संरक्षण, पुनर्जनन या संरक्षण या प्रबंधन करने का अधिकार** शामिल है जिसकी वे पारंपरिक रूप से सतत उपयोग के लिये संरक्षा एवं संरक्षण करते रहे हैं।

FRA 2006 के कार्यान्वयन के पीछे क्या तर्क था?

- FRA 2006 को कई पीढ़ियों से वन में निवास कर रही लेकिन आधिकारिक रिकॉर्ड से वंचित **अनुसूचित जनजातियों और अन्य परंपरागत वन निवासियों के वन अधिकारों की मान्यता, उनके पुनःस्थापन** और उन्हें निहित करने के लिये अधिनियमित किया गया।
- इस अधिनियम का उद्देश्य औपनिवेशिक और उत्तर-औपनिवेशिक भारत की वन प्रबंधन नीतियों—जहाँ वनों के साथ वनवासियों के सहजीवी संबंध को स्वीकार नहीं किया गया, के कारण **वन-निवासी समुदायों के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय को दूर करना था।**
- इस अधिनियम का उद्देश्य **वनवासियों को सतत तरीके से वन संसाधनों तक पहुँच बना सकने एवं उनका उपयोग कर सकने, जैव विविधता एवं पारिस्थितिक संतुलन को संरक्षित करने और वनवासियों को गैरकानूनी बेदखली एवं विस्थापन से बचाने** के लिये सशक्त बनाना है।

वनवासी समुदायों को किन अन्यायों का सामना करना पड़ा?

- **पूर्व औपनिवेशिक युग:** पूर्व औपनिवेशिक युग में स्थानीय समुदायों को अपने क्षेत्र या यहाँ तक कि एक व्यापक क्षेत्र के वनों पर पारंपरिक अधिकार प्राप्त था। भले ही राजा या सरदार विशिष्ट वनों में शिकार के अपने अधिकार का दावा करते थे, फिर भी स्थानीय समुदायों को वनों से अन्य सभी लाभ प्राप्त होते थे।
- **औपनिवेशिक युग:** औपनिवेशिक सरकार ने भारतीय वन अधिनियम 1878 पेश किया जो 'एमिनेंट डोमेन' (eminent domain)—यानी राजा सदैव समस्त संपत्ति का स्वामी होता है, के विचार पर आधारित था।
  - अधिकाधिक लकड़ी पाने और राजस्व को अधिकतम करने के लिये वनों की कटाई एवं रूपांतरण के लिये **शाही वन विभाग** की स्थापना की गई।
    - विभाग को **'राज्य' संपत्ति की स्थानीय समुदायों (जिन्हें अब अतिक्रमणकारी मान लिया गया)** से रक्षा करने का भी कार्य सौंपा गया।
  - **इस औपनिवेशिक वन नीति ने कई रूपों में अन्याय को बढ़ावा दिया, जैसे:**
    - अब चूँकि वनों को मुख्य रूप से लकड़ी के संसाधन के रूप में देखा जाने लगा तो **झूम खेती (shifting cultivation) पर प्रतिबंध लगा दिया गया।**
    - कृषि भूमि का तथाकथित सर्वेक्षण एवं बंदोबस्त अपूर्ण रहा और **यह राज्य के पक्ष में पूर्वाग्रही था।**
    - वानिकी कार्यों के लिये श्रमबल सुनिश्चित करने हेतु **वन ग्रामों (Forest Villages) की स्थापना** की गई जहाँ अनिवार्य श्रम (वस्तुतः बंधुआ श्रम) के बदले परिवारों (जिसमें मुख्यतः आदिवासी शामिल थे) को कृषि कार्य हेतु पट्टे पर वन भूमि दी जाती थी।
    - चूँकि वन अब राज्य की संपत्ति घोषित कर दिए गए थे, **वन उत्पादों तक हर तरह की पहुँच सीमित,** अस्थायी एवं प्रभार्य (शुल्क योग्य) हो गई और यह हमेशा वन नौकरशाही की दया पर निर्भर होती थी जो पुलिस शक्तियों से लैस थी।
      - स्थानीय आजीविका आवश्यकताओं के लिये किसी भी रियायत को 'विशेषाधिकार' कहा जाने लगा जिसे किसी भी समय संशोधित या निरस्त किया जा सकता था।
    - यहाँ तक कि जहाँ पहुँच की अनुमति थी, वहाँ भी **स्थानीय समुदाय के पास वन के प्रबंधन का कोई अधिकार नहीं था,** क्योंकि राज्य मूल्यवान वनों की कटाई में लगा था और भारी उपयोग वाले वनों को 'डि-फैक्टो ओपन-एक्सेस' बना दिया गया था।
- **स्वातंत्र्योत्तर युग:**
  - देश की स्वतंत्रता के बाद भी परिदृश्य में अधिक बदलाव नहीं आया। जब **सरकार ने जल्दबाजी में रियासतों और ज़मींदारियों को भारत संघ के अंतर्गत लाने का निर्णय लिया तो उनके वन क्षेत्रों को राज्य की संपत्ति घोषित** कर दिया और वहाँ रह रहे वनवासियों के बारे में कोई विचार नहीं किया।
    - जो लोग पीढ़ियों से वहाँ रह रहे थे, वे अचानक ही 'अतिक्रमणकारी' (encroachers) बन गए।
  - बाद में सरकार ने बढ़ती आबादी की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये 'ग्रो मोर फूड' (Grow More Food') जैसे विभिन्न अभियानों के तहत वन भूमि को पट्टे पर तो दिया, लेकिन उन्हें कभी भी उचित रूप से विनियमित नहीं किया गया।
  - बांधों से विस्थापित लोगों को **वैकल्पिक भूमि नहीं दी गई** और वे अन्य स्थानों की वन भूमियों के अतिक्रमण के लिये बाध्य हुए।
  - वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम 1972 **और** वन (संरक्षण) अधिनियम 1980 की कल्पना भी 'एमिनेंट डोमेन' के ढाँचे के भीतर ही की गई।
    - अभयारण्य और राष्ट्रीय उद्यान स्थापित करने के लिये भी कई समुदायों को बलपूर्वक उनकी वन भूमि से बाहर कर दिया गया।
  - विकास के लिये वनों का उपयोग करते समय **स्थानीय लोगों की राय पर विचार नहीं किया गया और उल्लेखनीय शुल्क वसूलने के बावजूद उनके जीवन पर पड़े प्रभाव के लिये उन्हें पर्याप्त मुआवजा** नहीं दिया गया।

वन अधिकार अधिनियम 2006 इन ऐतिहासिक अन्यायों को दूर करने में किस प्रकार मदद करता है?

- FRA उल्लेखनीय कदम है क्योंकि सबसे पहले तो यह **इन ऐतिहासिक (औपनिवेशिक) अन्यायों और स्वतंत्रता के बाद भी उनके बने रहने को स्वीकार करता है** और फिर तीन व्यापक रूपों में उनके निवारण का प्रयास करता है।
- तथाकथित 'अतिक्रमण' के मुद्दे को दिसंबर 2005 से पहले मौजूद वास करने और खेती या अन्य गतिविधियों को जारी रखने के **व्यष्टिक वन अधिकारों (IFR)** को मान्यता देने के माध्यम से संबोधित किया गया है।
- पूर्ण अधिकार मान्यता के साथ **वन ग्रामों को राजस्व ग्राम में परिवर्तित** किया जाना है।
- अभिगम्यता और नियंत्रण के मुद्दे को **ग्राम समुदायों के वनों तक पहुँच एवं उपयोग करने और गौण वन उत्पाद के स्वामित्व एवं बिक्री के अधिकारों को मान्यता** देने के रूप में संबोधित किया गया है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि **अभयारण्यों और राष्ट्रीय उद्यानों सहित उनकी पारंपरिक सीमाओं के अंदर वनों का प्रबंधन कर सकने के उनके अधिकार की पुष्टि** की गई है।
- यह **विकेंद्रीकृत वन प्रशासन सुनिश्चित** करता है, जहाँ प्रबंधन प्राधिकार और ज़िम्मेदारी को सामुदायिक अधिकारों से जोड़ता है।
  - अधिनियम यह चिह्नित करने के लिये एक लोकतांत्रिक प्रक्रिया निर्धारित करता है कि वन्यजीव संरक्षण के लिये सामुदायिक अधिकारों को कम करने या समाप्त करने की आवश्यकता क्यों है और कहाँ है।
  - जब किसी समुदाय के पास वन का अधिकार होता है तो इसका अर्थ होता है कि उन्हें वन में किसी भी बदलाव में अपनी बात रख सकने का एक

स्वतः अधिकार प्राप्त है और वे इन बदलावों को रोक भी सकते हैं। यदि कोई बदलाव होता है तो उन्हें **मुआवजा पाने का भी अधिकार** है।
    - नियमगिरि मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस अधिकार की पुनःपुष्टि की गई।
- हालाँकि **वन संरक्षण नियम 2022 और FCA संशोधन 2023** इस अधिकार को दरकिनार करना चाहते हैं, फिर भी राज्य ऐसे सहमति तंत्र स्थापित कर सकते हैं।

वन अधिकार अधिनियम के कार्यान्वयन से संबद्ध प्रमुख मुद्दे:

- **व्यष्टिक अधिकार बनाम सामुदायिक अधिकार:** कुछ राज्यों में राजनेताओं ने मुख्य रूप से व्यष्टिक या व्यक्तिगत अधिकारों पर ध्यान केंद्रित किया है, जिससे यह **अधिनियम एक 'अतिक्रमण नियमितीकरण' योजना में बदल गया है। यह दृष्टिकोण सामुदायिक अधिकारों की मान्यता और सुरक्षा की उपेक्षा** करता है, जो सतत वन प्रबंधन के लिये आवश्यक हैं।
- **व्यष्टिक वन अधिकारों की पर्याप्त रूप से मान्यता का अभाव:** व्यक्तिगत वन अधिकारों की मान्यता ठीक तरीके से नहीं की गई है और **वन विभाग के प्रतिरोध, अन्य विभागों की उदासीनता एवं प्रौद्योगिकी के दुरुपयोग के कारण इससे समझौता** किया गया है। दावेदारों को फाइलिंग प्रक्रिया के दौरान कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है और दोषपूर्ण एवं गैर-पारदर्शी अस्वीकृतियों तथा मनमाने आंशिक मान्यता का सामना करना पड़ता है।
- **कमज़ोर कनेक्टिविटी से ग्रस्त डिजिटल प्रक्रिया: डिजिटल प्रक्रियाओं, जैसे मध्य प्रदेश में वनमित्र (VanMitra) सॉफ्टवेयर, के कार्यान्वयन में कमज़ोर कनेक्टिविटी एवं कम साक्षरता दर वाले क्षेत्रों में चुनौतियाँ** प्रकट हुई हैं। यह मौजूदा अन्याय को बढ़ाता है और दावों को प्रभावी ढंग से दाखिल करने एवं संसाधित करने में बाधा उत्पन्न करता है।
- **सामुदायिक वन अधिकारों की अपूर्ण मान्यता:** वनों तक **पहुँच एवं प्रबंधन के सामुदायिक अधिकारों की सुस्त एवं अपूर्ण मान्यता FRA कार्यान्वयन में एक महत्त्वपूर्ण खामी** है। वन नौकरशाही इन अधिकारों के प्रति प्रतिरोधी रुख रखती है, जो संभावित रूप से अपने वनों के प्रबंधन में स्थानीय समुदायों के सशक्तीकरण को बाधित करती है।
- **अधिकांश राज्यों में CFR की सीमित मान्यता:** जबकि महाराष्ट्र, ओडिशा और छत्तीसगढ़ राज्य ने CFR को मान्यता देने में कुछ प्रगति की है, अधिकांश अन्य राज्यों में ऐसा नहीं हुआ है। महाराष्ट्र में गौण वन उत्पाद को वि-राष्ट्रीयकृत (de-nationalizing) करने के माध्यम से CFR को सक्रिय करना एक सकारात्मक उदाहरण है, लेकिन चुनौतियाँ अभी भी बनी हुई हैं (विशेष रूप से क्षमताशील खनन क्षेत्रों में)।
- **संरक्षणवादियों और 'डेवलपमेंट लॉबी' के लिये सुविधाजनक:** सामुदायिक अधिकारों की गैर-मान्यता कठोर संरक्षणवादियों और विकास पैरोकारों (Development Lobby) के हितों की पूर्ति करती है। संरक्षित क्षेत्रों में समुदाय '**स्वैच्छिक पुनर्वास' (voluntary rehabilitation)** के प्रति संवेदनशील हो जाते हैं और सामुदायिक सहमति प्राप्त किये बिना खनन या बांधों के लिये वनों का दोहन किया जा सकता है।
- **वन ग्रामों की उपेक्षा:** अधिकांश राज्यों में वन ग्रामों के मुद्दे को पर्याप्त रूप से संबोधित नहीं किया गया है जो व्यापक कार्यान्वयन की कमी को दर्शाता है।

आगे की राह:

- **ग्राम सभा का सशक्तीकरण:** सुनिश्चित किया जाए कि ग्राम सभा (गाँव में स्थानीय स्वशासन) वन प्रबंधन से संबंधित निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से शामिल हो।
- **समावेशी निर्णय लेना:** निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में अधिकार धारकों को शामिल करने को प्रोत्साहन दिया जाए ताकि सुनिश्चित हो कि उनके दृष्टिकोण और आवश्यकताओं पर विचार किया गया है।
- **शिक्षा और प्रशिक्षण:** वनवासियों को FRA के तहत उन्हें प्राप्त अधिकारों के बारे में सूचित करने के लिये जागरूकता कार्यक्रम एवं प्रशिक्षण सत्र आयोजित किये जाएँ।
- **क्षमता निर्माण:** वनवासियों के अधिकारों के समर्थन और वकालत के लिये नागरिक समाज संगठनों की क्षमता को सुदृढ़ करना।
- **निगरानी तंत्र:** यह सुनिश्चित करने के लिये निगरानी प्रणाली स्थापित करें कि वन विभाग और अन्य संबंधित प्राधिकार FRA के प्रावधानों एवं उद्देश्यों का पालन कर रहे हैं।
- **जवाबदेही के उपाय करना**: FRA के किसी भी उल्लंघन या गैर-अनुपालन के लिये जवाबदेही उपायों को लागू करें, जहाँ सुनिश्चित किया जाए कि ज़िम्मेदार अधिकारियों को जवाबदेह ठहराया जाए।
- **एकीकृत योजना:** एकीकृत योजनाएँ विकसित करें जो वनवासियों के अधिकारों एवं हितों का सम्मान करते हुए वनों के विकास एवं संरक्षण, दोनों ही आवश्यकताओं पर विचार करें।
- **परामर्शी प्रक्रियाएँ:** विकास और संरक्षण लक्ष्यों के बीच संतुलन की तलाश के लिये ऐसी परामर्शी प्रक्रियाओं में संलग्न होना जिसमें सभी हितधारक भागीदारी करें।

निष्कर्ष:

कुछ राज्यों का लक्ष्य अधिकारों को शीघ्रता से चिह्नित करना है, लेकिन **छत्तीसगढ़ जैसे क्षेत्रों में ऐसे द्रुत कार्यान्वयन से प्रायः वन विभाग को लाभ पहुँचता है, यह अधिकारों को विकृत करता है और नौकरशाहों को अत्यधिक नियंत्रण प्रदान करता है।** इस मुद्दे को संबोधित करने के लिये राजनेताओं, नौकरशाहों और पर्यावरणविदों द्वारा FRA के सार को समझना तथा उसका समर्थन करना महत्त्वपूर्ण है। ऐसा नहीं होने से पूर्व के अन्याय बने रहेंगे, वन प्रशासन में लोकतंत्र की कमी होगी और समुदाय के नेतृत्व वाले संरक्षण एवं सतत आजीविका का अवसर साकार नहीं हो सकेगा।

अभ्यास प्रश्न: वन अधिकार अधिनियम 2006 के प्रमुख प्रावधानों का परीक्षण कीजिये और विश्लेषण कीजिये कि भारत में वन-निवासी समुदायों के समक्ष विद्यमान ऐतिहासिक अन्याय को यह किस प्रकार संबोधित करने का लक्ष्य रखता है।

??????????:

प्रश्न. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिये:

1. मोरिंगा (सहजन वृक्ष) एक फलीदार सदापर्णी वृक्ष है।
2. इमली का पेड़ दक्षिण एशिया का स्थानिक वृक्ष है।
3. भारत में अधिकांश इमली लघु वनोत्पाद के रूप में संगृहीत की जाती है।
4. भारत इमली और मोरिंगा के बीज निर्यात करता है।
5. मोरिंगा और इमली के बीजों का उपयोग जैव ईंधन के उत्पादन में किया जा सकता है।

उपर्युक्त कथनों में से कौन-से सही हैं?

(a) केवल 1, 2, 4 और 5
(b) केवल 3, 4 और 5
(c) केवल 1, 3 और 4
(d) केवल 1, 2, 3 और 5

उत्तर:(b)

प्रश्न. राष्ट्रीय स्तर पर अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 के प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिये कौन सा मंत्रालय नोडल एजेंसी है?

(a) पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
(b) पंचायती राज मंत्रालय
(c) ग्रामीण विकास मंत्रालय
(d) जनजातीय मामलों का मंत्रालय

उत्तर: (d)

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/decoding-fra-2006-justice,-conservation,-and-challenges